• कविताएं...

औरत

सच मानिए एक औरत
मेरे भीतर हमेशा से रहती है।
कभी बहुत प्यारी सी
कभी बहुत क्रूर
कभी कपड़ों से लदी-फदी
कभी एक दम निर्वस्त्र।
रहती है
मेरे भीतर हरदम।
कभी होती है मां
कभी बेटी, कभी बहन
कभी पत्नी, कभी प्रेयसी
कितने रूपों में
समायी रहती है वह।
हम सब औरत से हैं
औरत के लिए
औरत के द्वारा
बगैर औरत
हमारा कोई वजूद नहीं हैं।
इस धरती पर औरत
दुनिया की सबसे
खूबसूरत नियामत हैं।
जो मेरे ख्यालों में हमेशा
बनी रहती हैं।
मैं अंत तक
अपने भीतर
एक औरत को
बचाए रखता हूं।

■ *नरेश मेहन*

सरहदी गांव

तोपों और मोर्टार
शेलों के शोर में
गुम हो गयी
बूढ़े की दम्मे की आवाज
फौजी गाड़ी में खींच कर
लिटाये जाने से पूर्व
उसकी बहू को
लगती थी
सबसे भयानक और कर्कश
उस बूढ़े की खांसने की आवाज
अभी किसी को सांस
लेने की फुर्सत नहीं है
खांसी भी मानो
बूढ़े को भूल गयी है...
अपने सरहदी गांव से दूर
कैंप में अपने लिए
बिस्तर लगाते हुए
बूढ़े के मुंह में कफ की जगह
घुल रहा है
दो दिनों की बासी
सब्जी का स्वाद ...

■ *नीरज नीर*

• कहानी/-डॉ. पद्मा शर्मा

दूर होती रोशनी...

गतांक से आगे...

स्कूल संचालक को अब अपनी जिम्मेदारी याद आ रही थी और रैली में बच्चों के साथ गयीं मैडम तो पसीना- पसीना हो रही थीं। माँ को चिन्ता सता रही थी- आजकल छोटी-छोटी बच्चियाँ असुरक्षित हैं, दिनदहाड़े उनकी इज्जत से खिलवाड़ हो रहा है फिर सपना तो.... अब शरीर संभाल रही थी।

रात भर सपना को ढूँढने की कोशिशें की गयीं पर सब निरर्थक...।

धुंधलका छंटने लगा था ... लोग सैर पर जाने लगे। अचानक थाने का फोन घनघनाया.. कोई बता रहा था कि पोलो ग्राउण्ड में एक लड़की बेहोश पड़ी है।

गाड़ियाँ दौड पड़ीं उस लड़की को देखने... । सपना की माँ को अनिष्ट की आशंका घेर रही थी। उस लड़की को देखते ही सपना की माँ बोल पड़ी-'' यही है सपना।'' उसके पास जाकर वो देख रही थीं कि कहीं से कपड़े तो नहीं फटे हैं या कोई अन्य जख्म। उसके हाथ में फफोले देख माँ रो पड़ी। सपना बेहोश थी, नुमाइंदे होश में आ चुके थे।

थाने लाकर उसे होश में लाने की कोशिश की जाने लगी। थोड़ी देर बाद उसे होश आया पर सबको देख वह सहम गयी। महिला पुलिस ने बड़े प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा- ''तुम पोलोग्राउण्ड में बेहोश कैसे हुयीं और ये फफोले कैसे पड़े?''

सपना पुलिस को देखकर डर गयी और मम्मी से लिपट गयी। माँ ने कहा, ''बता बेटा और और तेरे हाथ कैसे जले''

भूख-प्यास, भय, अंधेरा और अब पुलिस सब उसके दिमाग को जड़ कर रहे थे। वह धीरे-धीरे बोली -''तेज हवा से दीपक की लौ बुझ रही थी, ... दीपक रात भर जलना था न .. इसलिए मैं उसकी लौ के दोनों ओर हाथ रखे रही। धूप में खड़े रहने से और भूख-प्यास के कारण मैं बेहोश हो गयी।''

आँखों से आँसू ढुलककर माँ के आँचल को भिगोने लगे।

माँ ने और अधिक मजबूती से उसे अपनी बांहों में भींच लिया।

-समाप्त

• कहानी/-कृष्णा सोबती

मेरी मां कहां...

बहुत दिन के बाद उसने चाँद-सितारे देखे हैं। अब तक वह कहाँ था? नीचे, नीचे, शायद बहुत नीचे...जहाँ की खाई इनसान के खून से भर गयी थी। जहाँ उसके हाथ की सफाई बेशुमार गोलियों की बौछार कर रही थी। लेकिन, लेकिन वह नीचे न था। वह तो अपने नए वतन की आजादी के लिए लड़ रहा था। वतन के आगे कोई सवाल नहीं, अपना कोई खयाल नहीं! तो चार दिन से वह कहाँ था? कहाँ नहीं था वह? गुंजराँवाला, वजीराबाद, लाहौर! वह और मीलों चीरती हुई ट्रक। कितना घूमा है वह? यह सब किसके लिए? वतन के लिए, कौम के लिए और...? और अपने लिए! नहीं, उसे अपने से इतनी मुहब्बत नहीं! क्या लम्बी सड़क पर खड़े-खड़े यूनस खाँ दूर-दूर गाँव में आग की लपटें देख रहा है? चीखों की आवांज उसके लिए नई नहीं। आग लगने पर चिल्लाने में कोई नयापन नहीं। उसने आग देखी है। आग में जलते बच्चे देखे हैं, औरतें और मर्द देखे हैं। रात-रातभर जलकर सुबह खाक हो गये मुहल्लों में जले लोग देखे हैं! वह देखकर घबराता थोड़े ही है? घबराये क्यों? आजादी बिना खून के नहीं मिलती, क्रान्ति बिना खून के नहीं आती, और, और, इसी क्रान्ति से तो उसका नन्हा-सा मुल्क पैदा हुआ है! ठीक है। रात-दिन सब एक हो गये। उसकी आँखें उनींदी हैं, लेकिन उसे तो लाहौर पहुँचना है। बिलकुल ठीक मौके पर। एक भी काफिर जिन्दा न रहने पाये। इस हल्की-हल्की सर्द रात में भी 'काफिर' की बात सोचकर बलोच जवान की आँखें खून मारने लगीं। अचानक जैसे टूटा हुआ क्रम फिर जुड़ गया है। ट्रक फिर चल पड़ी है। तेज रफ्तार से।

सड़क के किनारे-किनारे मौत की गोदी में सिमटे हुए गाँव, लहलहाते खेतों के आस-पास लाशों के ढेर। कभी-कभी दूर से आती हुई अल्ला-हो-अकबर और 'हर-हर महादेव' की आवाजें। 'हाय, हाय'...'पकड़ो-पकड़ो'...मारो-मारो'...।

आग लगने पर चिल्लाने में कोई नयापन नहीं। उसने आग देखी है। आग में जलते बच्चे देखे हैं, औरतें और मर्द देखे हैं। रात-रातभर जलकर सुबह खाक हो गये मुहल्लों में जले लोग देखे हैं!

वह देखकर घबराता थोड़े ही है? घबराये क्यों? आजादी बिना खून के नहीं मिलती, क्रान्ति बिना खून के नहीं आती, और, और, इसी क्रान्ति से तो उसका नन्हा-सा मुल्क पैदा हुआ है! ठीक है। रात-दिन सब एक हो गये...

यूनस खाँ यह सब सुन रहा है। बिलकुल चुपचाप इससे कोई सरोकार नहीं उसे। वह तो देख रहा है अपनी आँखों से एक नई मुंगलिया सल्तनतशानदार, पहले से कहीं ज्यादा बुलन्द...।

चाँद नीचे उतरता जा रहा है। दूध-सी चाँदनी नीली पड़ गयी है। शायद पृथ्वी का रक्त ऊपर विष बनकर फैल गया है।

'देखो, जरा ठहरो।' यूनस खाँ का हाथ ब्रेक पर है। यह यह क्या? एक नन्ही-सी, छोटी-सी छाया! छाया? नहीं रक्त से भीगी सलवार में मूर्च्छित पड़ी एक बच्ची!

बलोच नीचे उतरता है। जख्मी है शायद! मगर वह रुका क्यों? लाशों के लिए कब रुका है वह? पर यह एक घायल लड़की...। उससे क्या? उसने ढेरों के ढेर देखे हैं औरतों के...मगर नहीं, वह उसे जरूर उठा लेगा। अगर बच सकी तो...तो...। वह ऐसा क्यों कर रहा है यूनस खाँ खुद नहीं समझ पा रहा...। लेकिन अब इसे वह न छोड़ सकेगा... काफिर है तो क्या?

बड़े-बड़े मजबूत हाथों में बेहोश लड़की। यूनस खाँ उसे एक सीट पर लिटाता है। बच्ची की आँखें बन्द हैं। सिर के काले घने बाल शायद गीले हैं। खून से और, और चेहरे पर...? पीले चेहरे पर...रक्त के छींटे।

यूनस खाँ की उँगलियाँ बच्ची के बालों में हैं और बालों का रक्त उसके हाथों में...शायद सहलाने के प्रयत्न में! पर नहीं, यूनस खाँ इतना भावुक कभी नहीं था। इतना रहम इतनी दया उसके हाथों में कहाँ से उतर आयी है? वह खुद नहीं जानता। मूर्च्छित बच्ची ही क्या जानती है कि जिन हाथों ने उसके भाई को मारकर उस पर प्रहार किया था उन्हीं के सहधर्मी हाथ उसे सहला रहे हैं!

यूनस खाँ के हाथों में बच्ची...और उसकी हिंसक आँखें नहीं, उसकी आर्द्र आँखें देखती हैं दूर कोयटे में एक सर्द, बिलकुल सर्द शाम में उसके हाथों में बारह साल की खूबसूरत बहिन नूरन का जिस्म, जिसे छोड़कर उसकी बेवा अम्मी ने आँखें मूँद ली थीं।

-जारी

• शायरी...

मुझ को तो मश्क़ -ए-समाअ'त है चलो तुम बोलो
तुम को सुनना मिरी आदत है चलो तुम बोलो
मैं ने ख़ामोशी को आसान किया है ख़ुद पर
मेरी बरसों की रियाज़त है चलो तुम बोलो

◆ ◆ ◆

तुम से आबाद है बातों की तिलिस्मी दुनिया
ये तुम्हारी भी ज़रूरत है चलो तुम बोलो
हमा-तन-गोश ज़माना है अभी मौक़ा है
तुम को हासिल ये सुहूलत है चलो तुम बोलो

◆ ◆ ◆

हुक्म गोयाई का जब तक न मिले 'नुसरत' को
तब तलक तुम को इजाज़त है चलो तुम बोलो

-नुसरत मेहदी

• इक़ सवाल था...

मैं भी तो इक सवाल था हल ढूंढते मेरा
ये क्या कि चुटकियों में उड़ाया गया मुझे
अब ये आलम है कि मेरी ज़िंदगी के
रात-दिन
सुबह मिलते हैं मुझे अख़बार में लिपटे हुए
हवाएं गर्द की सूरत उड़ा रहीं हैं मुझे
न अब ज़मीं ही मेरी है, न आसमान मेरा
धड़का था दिल कि प्यार का मौसम गुज़र गया
हम डूबने चले थे कि दरिया उतर गया

-निश्तर ख़ानक़ाही